अनुसंधान और शोध को पिंजरे में बंद करने का प्रयास

नवाचार शायद ही कभी निगरानी में पनपता है। यह उन क्षेत्रों में पनपता है, जहाँ स्वतंत्र रूप से खोज की जाती है, असफलता को सहन किया जाता है, और जिज्ञासा को शांत करने की पूरी छूट दी जाती है।

शैक्षणिक स्वतंत्रता कोई भोग-विलास नहीं है। यह प्रकृति के लिए ऑक्सीजन है। यह वह आधार है, जिस पर महान राष्ट्र अपनी वैज्ञानिक और सांस्कृतिक पूंजी का निर्माण करते हैं।

वर्तमान में भारत के सामने बड़ी चुनौती है कि वह शोध का दिशा देने और स्वतंत्रता प्रदान करने के बीच संतुलन कैसे बनाता है। हाल ही में केंद्र सरकार ने मंत्रालयों से पीएचडी मार्गदर्शकों के चयन की प्रक्रिया पर पुनर्विचार करने और डॉक्टरेट अनुसंधान को नवाचार, राष्ट्रीय प्राथमिकताओं और अकादमिक जगत के सहयोगी उद्योगों की ओर ले जाने को कहा है। उद्योग जगत से शोध-नवाचार का संबंध जरूरी है, लेकिन अनुसंधान और विकास में मार्गदर्शन और शोध के विषयों के चयन पर दबदबा बनाने से शैक्षणिक स्वतंत्रता ही कुचली जाएगी।

अनुसंधान की केंद्रीय योजना बनाने में अगर चीन और तत्कालीन सोवियत संघ का उदाहरण लिया जा रहा है, तो यह भी याद रखना चाहिए कि परिणाम तो सटीक मिले थे, लेकिन अन्वेषण के दबावपूर्ण मॉडल की भारी कीमत भी उन्हें चुकानी पड़ी थी।

भारत के इस प्रस्तावित मॉडल से भी कुछ ऐसा ही खतरा है। सरकार द्वारा अनुमोदित शोध विषयों या मार्गदर्शकों की सूची 'गैर-प्राथमिकता' वाले क्षेत्रों; जैसे कला, मानविकी और अन्य को दरकिनार कर देगी।

सरकार को राष्ट्रीय प्राथमिकताओं की पहचान करनी चाहिए। उनके लिए अधिक प्रोत्साहन भी देना चाहिए। लेकिन यह सब एक निमंत्रण के रूप में आना चाहिए, निर्देश के रूप में नहीं।

'द इकॉनॉमिक टाइम्स' में प्रकाशित संपादकीय पर आधारित। 27 अक्टूबर, 2025